International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 05, No. 01(III), January - March, 2023, pp. 207-214

व्यंग्य का शास्त्रीय विवेचन

डॉ. मोहन लाल शर्मा*

प्रस्तावना

व्यंग्य का उद्गम

सृष्टि के प्रारम्भ से इन दो स्थितियों पर विवाद चला आ रहा है कि 'क्या होना चाहिए था' 'और क्या हो रहा है।' 'सामान्य व्यक्ति' 'जो हो रहा है' उसे स्वीकार कर लेता है और सन्तोष कर लेता है कि वह उसकी नियति है। दूसरे प्रकार के व्यक्ति वह होते हैं जो यह अनुभव नहीं करते, वरन् चाहते हैं कि 'जो होना चाहिए था वही हो।' जगत की गति उसे वास्तविक रूप से प्रभावित करती है। वह समाज–सुधार लाना चाहता है, अन्याय का प्रतिरोध करना चाहता है। और साहित्य के रचयिता इसी व्यंग्य रूपी अस्त्र को ग्रहण करते हैं।

रोम में अमर्यादित नाटकों के लिए एक शब्द प्रयुक्त होता था–'जनतहम' बाद में लातिन में यह 'Satura' बन कर आया और अंग्रेजी 'Satere' बना। इसी 'Satire' शब्द के पर्याय स्वरूप हिन्दी में व्यंग्य, विकृति, व्यंग, उपहास–चार शब्द प्रचलित हैं। इनमें 'व्यंग्य' सर्वाधिक प्रचलित संज्ञा है।

व्यंग की अपेक्षा 'व्यंग्य' का प्रयोग अधिक प्रचलित एवं चिन्तकों द्वारा समर्थित है।

अतएव 'Satire' के पयार्य स्वरूप 'व्यंग्य' को अत्यधिक उपयुक्त मानना चाहिए। व्यंग्य 'वि' उपसर्गपूर्वक 'अज्ज' धातु में 'ण्यत्' प्रत्यय लगाकर बना, जिसके कई अर्थ हैं–

गूढ़ अथवा अप्रत्यक्ष इंगित के द्वारा निर्देश, विविक्षा के द्वारा निर्देश, सांकेतित अर्थ और शब्द की तीसरी शक्ति व्यंजना द्वारा निर्दिष्ट अर्थ। हिन्दी में व्यंग्य शब्द की व्युत्पत्ति विंअंग से मानी गई है। 'नालन्दा विशाल शब्द सागर में शब्द की व्यंजना कृति से प्रकट होने वाले अर्थ 'व्यंग्य' की व्युत्पत्ति का उत्स माना गया है।

व्यंग्य शब्द अर्थ की दृष्टि से बहुआयामी है। वर्तमान समय में हिन्दी में इस शब्द का प्रयोग अंग्रेजी भाषा के शब्द 'सेटायर' के पर्याय रूप में ही किया जा रहा है। व्यंग्य के सम्बन्ध में यह सामान्य सी धारणा है कि इसका प्रारम्भ गाली–गलोच से हुआ होगा। तदुपरान्त पहले व्यंग्य व्यक्तिगत स्तर पर परिष्कृत हुआ होगा, और फिर सामाजिक स्तर पर। परिवार, समाज और राष्ट्र एवं मस्तिष्क के लिए व्यंग्य एक उपयोगी आयुध का काम करता है। व्यंग्य एक चुभता हुआ काँटा है जो वाणी और लेखनी के माध्यम से उत्पन्न होता है। व्यंग्य को सफल तथा सार्थक, संवेदनशीलता, गम्भीरता, बौद्धिकता, सांकेतिकता एवं तटस्थ विश्लेषण ही बनाते हैं एवं वही व्यंग्य को गहरा और श्रेष्ठ बनाते हैं।

व्यंग्य की परिभाषा

'व्यंग्य' समाज की वस्तुगत परिस्थितियों में निहित अन्तर्विरोधों और असंगतियों की भाषायी अभिव्यक्ति है। हर समाज के हर युग में कुछ आदर्श होते हैं और कुछ मान्यताएँ होती हैं। जब वे आदर्श और यथार्थ की इस विसंगति को प्रत्यक्ष रूप से रोकने में अपने को असमर्थ पाते हैं, तब उनके अन्तर का क्षोभ आक्रोश बनकर शब्द का रूप ले लेता है। वही शब्द 'व्यंग्य' के रूप में फूट पड़ता है। यदि सत्य के हाथ में कोई सबसे ज्यादा तीखा, मजबूत साधन है तो वो केवल व्यंग्य ही हो सकता है। व्यंग्य से तात्पर्य, जिसमें मनुष्य या समाज की बुराईयाँ या न्यूनता को सीधे शब्दों में न कहकर वह तीखे शब्दों में व्यक्त करता है। जो नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, झूठ, पाखण्ड, अन्याय, पापाचार, रिश्वतखोरी, लालफीताशाही आदि को पकड़ता है। इन पर सहानुभूतिपूर्वक जनता को हँसाता है लेकिन ये हँसी प्रसन्नता की नहीं बल्कि एक समुदाय के प्रति तीखी कसक होती है।

---

* भाषा–संपादक, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, राजस्थान।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने व्यंग्य को हास्य का ही उपभेद स्वीकार करते हुए, व्यंग्य को इस प्रकार से परिभाषित किया है–'व्यंग्य वह है जो कहने वाला अधरोष्ठ में हँस रहा हो और सुनने वाला तिलमिला उठा हो, और फिर वह कहने वाले को जवाब देना अपने को ओर भी उपहासास्पद बना लेना हो जाता हो।''

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार–'आक्रमण करने की दृष्टि से वस्तु स्थिति को विकृत कर उससे हास्य उत्पन्न करना ही व्यंग्य है।''

व्यंग्य सम्बन्धी इसी पारम्परिक धारणा को डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी ने भी ग्रहण किया है–''आलम्बन के प्रति तिरस्कार, उपेक्षा या भर्त्सना की भावना लेकर बढ़ने वाला हास्य व्यंग्य कहलाता है।''

व्यंग्य के द्वारा समाज में व्याप्त सड़ी–गली रूढ़ियों को सामाजिक क्षेत्र से, पक्षपात या रिश्वतखोरी राजनैतिक क्षेत्र से, पाखण्ड–झूठ, ढकोसला आदि धार्मिक क्षेत्र से, असाहित्यिक रचनाएं, अधजल लेखकों से, यह महत्वपूर्ण कार्य व्यंग्य रूपी अस्त्र के द्वारा ही किया जा सकता है। इस सन्दर्भ में डॉ. शान्तारानी की परिभाषा सटीक है–''व्यंग्य किसी संस्था, समाज, व्यक्ति अथवा समूह की दुर्बलताओं तथा अवगुणों का उद्घाटन कर उस पर आक्षेप करता है।''

कृश्न चंदर के मतानुसार–''व्यंग्य ही वो तेज नश्तर है, जिससे लेखक और कवि समाज के नासूर के गंदे फोड़े खोलता है और उसे स्वास्थ्य, शक्ति, प्रगति की ओर बढ़ाने की चेष्टा करता है।''

सुबोध कुमार श्रीवास्तव के अनुसार–'व्यंग्य वह है जो पाठक के बहिरंग को तो हँसने के लिए बाध्य कर देता है, किन्तु उनका अन्तर उसी की हंसी को स्वीकार नहीं कर पाता और एक अनकही चुभन महसूस करता है।''

कन्हैया लाल नंदन के शब्दो में– ''व्यंग्य आक्रोश का उबलता हुआ तूफान नहीं है, पीड़ा और आक्रोश का संयमपूर्ण सृजन है– हां, संयमपूर्ण सर्जन। जहाँ आदमी आक्रोश से पागल नहीं हो जाता, वह अपने आक्रोश को पिघले हुए तांबे के रूप में तपाकर रचनात्मक सांचे में ढालता है ताकि विकृति चौराहे पर नंगी खड़ी की जा सके।''

व्यंग्य की आत्मा निरन्तर जीवन की निकटता का अनुभव करती है और विशिष्ट निर्ममता के आवरण व्यंग्यकार की पहचान है। सच्चा व्यंग्य समीक्षक वही होता है जो सहभागी होता है। आँख में उँगली डालकर दिखाने का काम व्यंग्य ही कर पाता है। हमारे अनुसार व्यंग्य मात्र हास्य की सृष्टि नहीं करता, वह करुणा और अमर्ष जैसे भावों का संचार भी करता है। वास्तव में श्रेष्ठ व्यंग्यकार तटस्थ रहकर जीवन और समाज में व्याप्त विसंगतियों और विद्रूपताओं के प्रति मन में उबल रहे आक्रोश की संयमित अभिव्यंजना करता है। विद्रूपताओं, विसंगतियों और अनाचारों पर किया गया किसी भी प्रकार का साहित्यिक प्रहार व्यंग्य की सीमा में होता है। सशक्त व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई के मतानुसार –व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है, जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है। वह मरा नहीं है। बल्कि मैं यह कह रहा हूं कि जीवन के प्रति व्यंग्यकार की उतनी निष्ठा होती है जितनी गम्भीर रचनाकार की, बल्कि ज्यादा ही। वह जीवन के प्रति दायित्व का अनुभव करता है। जिन्दगी बहुत जटील चीज है। इसमें खालिस हंसना या खालिस रोना जैसी चीज नहीं होती है। बहुत सी हास्य रचनाओं में करुणा की धारा है। .... अच्छा व्यंग्य सहानुभूति का सबसे उत्कृष्ट रूप होता है। व्यंग्य के स्वरूप पर अधिक व्यापकता के साथ विचार करते हुए समालोचक डॉ. शेरजंग गर्ग ने कहा है– व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना है, जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं, कथनी और करनी के अन्तरों की समीक्षा अथवा हिन्दी भाषा की टेढ़ी भंगिमा देकर अथवा कभी–कभी पूर्णतः सपाट शब्दों, में प्रहार करते हुए की जाती है। वह पूर्णतः अगम्भीर होते हुए भी गम्भीर हो सकती है, निर्दय लगते हुये दयालु हो सकती है, प्रहारात्मक होते हुए भी तटस्थ लग सकती है, मखौल लगती हुई बौद्धिक हो सकती है, अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णतः सत्य हो सकती है।''

व्यंग्य को स्पष्ट करते हुए डॉ. प्रभाकर माचवे ने लिखा है कि– ''मेरे लिए व्यंग्य कोई पोज या अन्दाज या लटका या बौद्धिक व्यायाम नहीं पर एक अस्त्र है। सफाई करने के लिए किसी को तो हाथ गन्दे करने ही पड़ेंगे, किसी न किसी को तो बुराई अपने सर लेनी ही पड़ेगी।''

सुप्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान रिचर्ड गारनेट ने सेटायर के सम्बंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है–"व्यंग्य मनोविज्ञान या वीभत्स – बोध की वह अभिव्यक्ति है जो उपहास तथा भदेस द्वारा उत्तेजित हो।''

हिन्दी साहित्य में व्यंग्य की परम्परा

हिन्दी व्यंग्य की कहानी आक्रोश, परिवर्तन, कामिता और यथार्थ के साक्षात्कार की गाथा है। व्यंग्यकार अपनी प्रतिभा से व्यंग्य गढ़ता है लेकिन उसकी कलम जान–बूझकर उन्हीं स्थितियों पर उठती है जिनके केन्द्र में पीड़ा, शोषण, विकृति और अनाचार है। डॉ. धनंजय वर्मा के अनुसार– "सच्चे और सार्थक व्यंग्य की यह ताकत होती है कि वह मूल्यों की आधापापी और संक्रान्ति का चित्र ही नहीं देता, नए मूल्यों की तलाश और उनकी ओर इशारा भी करता है।''

हिन्दी के प्रारम्भिक युग के साहित्य में भी व्यंग्य का अभाव नहीं रहा है। भारत में वीर गाथाकालीन युग के साहित्य में पराभूत, संत्रस्त और हर प्रकार की चेतना से विहीन राष्ट्र विस्थापना की पीड़ा भोग रहा था। संस्कृति और शौर्य के क्षेत्र में विश्व का अद्वितीय राष्ट्र 'भारत' जब पराजय की अवमानना से झुक चुका हो, तब साहित्यकारों के साहित्य में सामाजिक व्यंग्य के दर्शन, कैसे संभव हो सकते थे ? फलस्वरूप जो भी थोड़ा बहुत व्यंग्य मिलता है, उसका स्वर व्यक्तिपरक है। समाज के संस्थापक जब भोगविलास और झूठे घमण्ड की भावना में रत हों, अपनी पराजय को ठुकरा रहे हों, तब साहित्यकारों से यह अपेक्षा करना कि वह व्यंग्य की पैनीधार से उनका खोखलापन उजागर कर देगा, एक असंभव कल्पना है।

हिन्दी साहित्य में वीरगाथाकाल 'व्यंग्य' की दृष्टि से यद्यपि रक्तरंजित काल रहा, परन्तु फिर भी सन्त सिद्ध और नाथपंथी साहित्यकारों द्वारा यदा–कदा किया गया व्यंग्य बहुत कुछ व्यक्तिवादी ही था। भक्तिकाल तक आते–आते जनता विदेशी शासन को स्वीकार कर चुकी थी। ओजस्वी गानेवाला राष्ट्र पराधीनता को अपना भाग्य मान चुका था। अतः इस युग में कवियों ने भगवान की शरण लेकर शान्तरस की ही साधना की थी। डॉ. नगेन्द्र के विचार इस काल के बारे में सटीक हैं साथ ही व्यंग्य की परम्परा का भी विश्लेषण स्पष्ट हो जाता है– ''वीरगाथा की अन्तिम प्रतिध्वनि हम्मीरदेव के पतन के बाद ही शान्त हो गयी। यह देश के पतन की चरम सीमा थी। देश की परिस्थितियों ने इसी समय कबीर को जन्म दिया जिसकी आत्मा से निराशा ने ही अस्थिसार भर दिया था। नैराश्य की अंधेरी रात्रि में पापों और अत्याचारों की इस झंझा में दुर्बल शरीर कबीर अचल पर्वत के सदृश्य खड़ा हुआ, हिन्दू और मुसलमानों को सावधान करता रहा। सीधे ढंग से न मानने वालों के लिए उसके पास एक साधन था श्व्यंग्यश। इस वृद्ध जुलाहे के शब्दों में गजब की शक्ति थी, उसकी फटकारें उसके व्यंग्यतीर की तरह सुनने वाले के हृदय में प्रवेश करते थे और यह उसकी चोट से तड़पकर वहीं बैठ जाता था।''

इस काल के श्रेष्ठ संत कबीर ने जातिगत, वंशगत, धर्मगत, संस्कारगत, विश्वासगत और शास्त्रगत विशेषताओं के फैले हुए जाल को छिन्न–भिन्न करने के लिए एक अदम्य साहस के साथ उच्च वर्ग की मान्यताओं की तीखी आलोचना की। पंडित और शेख दोनो ही पर उन्होंने समानरूप से व्यंग्य की तीखी मार मारी थी। इनके व्यंग्यों में कचोट है। वह आलम्बन पर सीधा प्रहार करते हैं। उनके हृदय में इन खोखली प्रथाओं के प्रति रतिभर भी स्थान नहीं है।

कबीर के साथ–साथ सूर, तुलसी भी भक्तिकाल साहित्य की अनूठी देन थे। तुलसी ने दुष्टों को सुधारने के प्रयास किए हैं। तुलसी ने सामाजिक और निजी जीवन पर भी व्यंग्य किये हैं। तुलसी ने समाज की त्रुटियों पर 'व्यंग्य' करके ही सन्तुष्ट नहीं होते बल्कि समाज को 'रामराज्य' का आदर्श देते हैं। तुलसी ने वचन–विद्ग्धता द्वारा व्यंग्य का सृजन किया है। उन्होंने मानवीय, दुर्बलताओं व प्रवृत्तियों को आधार बनाकर लिखा है। इसी तरह सूर का अपने ऊपर व्यंग्य, भ्रमरगीत में गोपियों का कृष्ण पर व्यंग्य वैयक्तिक है। सूर के व्यंग्य काव्य में प्रेम का ही आधार है, रसात्मक की चेष्टा है तथा बुद्धि की कुशलता।

वास्तव में हिन्दी साहित्य में व्यंग्य की परम्परा काफी लम्बी है। आदिकाल से लेकर वर्तमान काल तक इस विधा पर लेखनी चलाई जा रही है। साहित्यकारों की एक लम्बी परम्परा ने व्यंग्य साहित्य को समृद्ध किया है। समूचे इतिहास में मील का पत्थर बनने का गौरव, कबीर, भारतेन्दु आदि साहित्यकारों को दिया जाता रहा है। जहाँ–जहाँ हर कदम पर व्यंग्य का पैनापन शब्दों के मायाजाल में रूपायित रहता है।

व्यंग्य के भेद

हास्य के भेद के रूप में जिन तत्वों की चर्चा होती रही है उन सबका सीधा सम्बन्ध व्यंग्य के साथ है। व्यंग्य को विभाजित करने की अभियोजना मानसिक, साहित्यिक और व्यावहाररिक सन्दर्भों में की जा सकती है। प्रेरणा और प्रभाव के आधार पर भी व्यंग्य का विभाजन किया जा सकता है।

डॉ. शेरजंग गर्ग ने प्रेरणा के आधार पर व्यंग्य को दो वर्गों में विभक्त किया है–

''प्रेरणा के आधार पर व्यंग्य को दो रूपों, यथा– वैयक्तिक और निर्वेयक्तिक में विभक्त किया जा सकता है। वैयक्तिक रूप के भी दो प्रकार होते हैं। यथा– आत्म–व्यंग्य और परास्थ व्यंग्य। इसी प्रकार निर्वेयक्तिक व्यंग्य के दो रूप पाये जाते हैं–

- राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक परिस्थितियों पर अथवा इन परिस्थितियों की विडम्बना को उभारने वाला व्यंग्य।
- देवी एवं नियति की दारुणता को दर्शाने वाला व्यंग्य।''

डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी ने भी व्यंग्य को आश्रयानुसार ही वर्गीकृत किया है–

"वास्तव में व्यंग्य दो प्रकार का होता है–

1. व्यक्तिगत व्यंग्य 2. समिष्टगत व्यंग्य का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है– धर्म सम्बंधित, समाज सम्बंधित, साहित्य सम्बंधित, राजनीति सम्बन्धित, मानवीय दुर्बलताओं से सम्बन्धित।''

उपर्युक्त व्यंग्य विभाजन चरित्र एवं महत्व के अनुरूप न होकर आलम्बन के अनुसार है। डॉ. शेरजंग गर्ग ने उसी परम्परा में आलम्बन के आधार पर आत्म–व्यंग्य और परस्थ व्यंग्य जैसे स्थूल भेदों को मान्यता दी है। व्यंग्य को वैयक्तिक अथवा निर्वेयक्तिक जैसे वर्गों में विभाजित करना भी आँख मूंद कर बांट देने के समान है।

''शास्त्र की दृष्टि से व्यंग्य तीन प्रकार के माने गये हैं– 1. वस्तु रूप 2. अलंकार रूप 3. रस रूप। आचार्य रा. शुक्ल ने इन्हीं प्रकारों को ''वस्तु व्यंजना, अलंकार व्यंजना और भाव व्यंजना के रूप में रखा है।''

सामाजिक दृष्टि से व्यंग्य के मुख्यतः दो रूप होते हैं–

- **व्यक्ति परक व्यंग्य**– जिसका सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन से होता है जो स्वयं पर भी किये जा सकते हैं और दूसरे पर भी। अनेक लेखकों द्वारा स्वयं पर किये गये व्यंग्य तथा 'उग्र' जी के 'बुढापा' जैसे निबन्ध इसी कोटि में आते हैं।
- **समाज परक व्यंग्य**– जिनके अन्तर्गत सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक और साहित्यिक सभी प्रकार के व्यंग्य हैं, जो इन क्षेत्र की न्यूनताओं पर चोट करते हैं।

साहित्य में जब व्यक्तिपरक व्यंग्य का उद्देश्य सामाजिक चेतना होगा तो उसमें भी तीन भेद होंगे–

- **विनोदात्मक व्यंग्य :** इस प्रकार के व्यंग्य का कोई सामाजिक उद्देश्य नहीं होता। ये शुद्ध हास्य और विनोद के निमित्त किये जाते हैं।
- **सुधारात्मक व्यंग्य :** इन्हे रचनात्मक व्यंग्य भी कहा जा सकता है। इस प्रकार के व्यंग्य सामाजिक चेतना उत्पन्न करने, कुरीतियों का विघटन करने तथा व्यक्ति एवं समाज को उन्नत बनाने के निश्चित उद्देश्य से लिखे जाते हैं।
- **ध्वंसात्मक व्यंग्य :** जो ऐसा व्यंग्य जिसमें सामाजिक व व्यक्तिगत विकृत्तियों के ध्वंस की इच्छा निहित होती है तथा जिसमें कटुता, तिक्तता और आक्रमकता अधिक होती है उसे ही ध्वंसात्मक व्यंग्य कहा जाता है।''

व्यंग्य के प्रयोग स्वभाव और प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए व्यंग्य–विभाजन के प्रयास पाश्चात्य चिन्तकों ने किए हैं।

- **व्यंग्य के साधन या भेद**–युगीन चेतना, व्यक्तिगत, विशिष्टिताओं और लक्ष्य की विविधता के कारण व्यंग्यकारों ने प्रहार करने के लिए अनेक साधन अपनाए हैं। प्रहार दो तरह से किया जा सकता है यथा–अस्त्र छुपाकर चतुराई से की गई एक ही चोट में व्यंग्यकार शत्रु को ध्वस्त कर देता है और दूसरा प्रहार शत्रु को धाराशाही करने के उद्देश्य से तब तक चोट किए जाता है जब तक उसका नाश न हो जाए। इसी कारण व्यंग्य के अनेक साधन हैं, जिनमें प्रमुख – उपहास, विडम्बना अपकर्ष या आक्षेप, अतिशय तथा वैदग्ध्य है।

- **उपहास (RIDICULE) :** उपहास व्यंग्य का अचूक अस्त्र है। उपहास का उद्देश्य किसी का मजाक उड़ाना अथवा किसी व्यक्ति को हीन सिद्ध करना होता है। उपहास का प्रहार अप्रत्यक्ष न होकर प्रत्यक्ष होता है व्यंग्य के पात्र के प्रकट छद्म–रूप का एक कारण आत्मबोध का अभाव है। पात्र के मिथ्या विचार उसके आत्मबोध में बाधक होते हैं। व्यंग्यकार उपहास द्वारा व्यंग्य पात्र के आरोपों को उघाड़ कर उसके यथार्थ रूप को प्रकट करता है। अलेक्जेंडर बेन के अनुसार – ष्उपहास के शब्दो का अर्थ ठीक–ठाक वही होता है, किन्तु एक तीव्र, कटु, ताना मारने वाली तीक्ष्णता लिए हुए। यह रोष और क्रोध का औजार है, प्रहार करने का अस्त्र है।''

उपहास का उद्देश्य है पात्र को लज्जित करना। इस तरह से व्यंग्यकार शिष्टाचार की ओर से स्वीकृत मिथ्याचारों का उपहास कर पात्र को लज्जित करता है।

- **व्यांजोक्ति (IRONY) :** किसी बात को जब इस ढंग से कहा जाय कि उसका वास्तविक अर्थ प्रच्छन्न हो तो वहाँ व्याजोक्ति होती है। जर्मन भाषा में प्रयुक्त 'EIRONEIA' शब्द से अंग्रेजी में IRONY शब्द आया, जिसके अनुवाद स्वरूप हिन्दी में भ्रान्त, विडम्बना आदि शब्दों की प्रस्तावना की गई है। लेकिन आयरोनी की आपेक्षपूर्ण भंगिमा व्याजोक्ति से ही अभिव्यक्त होती है। इसमें वास्तविक अर्थ गुप्त रखा जाता है और छल कौशल के सहारे विनोद की आड़ में प्रहार किया जाता है। इसका चरित्र उस दवा जैसा होता है जो जीभ पर तो मीठी लगती है, लेकिन गले के नीचे उतरते ही उसका स्वाद कड़वा हो जाता है।

  डेविड वोरचेस्टर ने उसे ''अव्यावहारिक मजाक'' की संज्ञा दी थी।

- **अपकर्ष (DIMINATION):**– किसी प्रतिष्ठित व्यापार के साथ निन्दित अप्रतिष्ठित व्यापार को वैदग्ध्य पूर्ण ढंग से एक साथ रखना तथा उनमें साम्य स्थापित कर निर्णय देने की प्रवृत्ति अपकर्ष के अन्तर्गत आती है। एक ही पंक्ति में उत्कर्षमय तथा अपकर्षमय नामों अथवा वस्तुओं को एक साथ लिखने से उत्कर्ष द्योतक नाम अथवा वस्तुएं व्यंग्य का लक्ष्य बन जाएँगी तथा अपकर्षात्मक नाम आदि व्यंग्य का साधन।

आक्षेप तथा अपकर्ष एक दूसरे के निकट हैं। ईमानदारी के साथ किया गया आक्षेप भले ही आक्रोशयुक्त हो, किन्तु अपराधियों को उद्विग्न करने में वह आक्षेप उतना ही सफल होगा जितना ईमानदारी से यह किया जायेगा। एम. एच. अब्राहम के शब्दो में– "आक्षेप किसी व्यक्ति का ऐसा सम्पूर्ण चित्र होता है जिसमें उसको काट खाने वाला मजाक उड़ाया जाता है, कभी–कभी तिरस्कार की शैली में भी।'' आक्षेप सीधा और तुरन्त चोट पहुंचाने वाला हथियार है, जिसमें व्यंग्य किसी विशेष कौशल की अपेक्षा नहीं करता।

- **वैदग्ध्य (WIT):**– आंग्लसेक्सन भाषा के Witan शब्द से निष्पन्न अंग्रेजी Wit के हिन्दी पर्याय की समस्या बड़ी विवादाग्रस्त है, जिसके फलस्वरूप 'विट' के लिए वाग्वैदग्ध्य, चमत्कारिक वचन, उक्ति वैचित्र्य, विनोद वचन, चतुरालाप, आदि शब्दों की प्रस्तावना हुई है। **वैदग्ध्य** व्यंग्य का यह भेद मानसिक सजगता एवं संक्षिप्त अभिव्यक्ति धरातल पर विद्युत की भांति चमक कर विलीन हो जाने वाला प्रकाश है। वैदग्ध्य को परिभाषित करते हुए लिखा है भाषण या लेख का वह गुण या तत्व जो किसी विचार और उसकी अभिव्यक्ति के ऐसे सुघड़ और सुन्दर सम्बन्ध से उत्पन्न होता है, जो अपने अप्रत्याशित स्वरूप के द्वारा लोगों के मन में आश्चर्य उत्पन्न करता है, वैदग्ध्य है।''

वैदग्ध्य दो प्रकार का होता है– जहाँ केवल शब्दों के चमत्कार द्वारा वैदग्ध्य सम्भव हो उसे वाग्वैदग्ध्य और जहाँ विचारों के चमत्कार द्वारा वैदग्ध हो उसे मति–वैदग्ध्य कहा जाता है। जब वैदग्ध्य सौद्देश्य हो तथा किसी लक्ष्य पर चोट करता हो तो वह व्यंग के साधन अथवा अस्त्र के रूप में प्रयुक्त होता है। वचन वैदग्ध्य के चमत्कार के कारण ही व्यंग्य में तीखापन आ जाता है।

- **अतिशयता (EXAGGERATION):** अतिशयता का अंश व्यंग्य में इतना व्यापक है कि इसे व्यंग्य का मूल तत्व भी माना जा सकता है। अतिशयता का सम्बन्ध व्यंग्य–चेतना के स्पष्टीकरण तथा व्यंग्य – प्रक्रिया के साथ अधिक है। व्यंग्यकार खटकने वाली असंगतियों, विसंगतियों तथा अन्तर्विरोधों को प्रभावोत्पादक रूप से प्रकट करने के उद्देश्य से अतिशयता का प्रयोग करता है। वास्तविकता यह है कि यदि अतिशयताः व्यंग्यकार का स्वभाव हो तो उसका व्यंग्य अधिक प्रभावोत्पादक न हो पाएगा।

व्यंग्य की उपयुक्त भंगिमाओं का वर्गीकरण आलम्बन के आधार पर न होकर व्यंग्य की चारित्रिक भंगिमा के आधार पर हुआ है। व्यंग्य के प्रमुख साधन भी माने जाते हैं। किन्तु इनके अतिरिक्त अन्य साधन भी व्यंग्य करने के लिए अपनाये जा सकते हैं। अनेक बार व्यंग्यकार चुटकला सुनाकर अथवा कोई कहानी सुनाकर भी व्यंग्य योजना करते हैं। रूपक, उपमा तथा श्लेष अलंकारों के माध्यम से भी व्यंग्य किया जाता रहा है।

व्यंग्यःचारित्रिक गुण एवं दोष

'हिन्दी का स्वातंर्त्योत्तर हास्य और व्यंग्य' के अन्तर्गत डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी ने व्यंग्य चरित्र के बारे में कहा है– ''व्यंग्य का स्वभाव अपनी सन्तान का कल्याण चाहने वाले पिता के समान होता है और इसी नाते वह समाज को डाँटता है अनुशासित करता है। यह अनुशासन तभी सटीक और सार्थक हो सकता है जबकि व्यंग्य स्वस्थ एवं त्रुटिहीन हो।''

व्यंग्य के चारित्रिक औदात्य की यह पहली शर्त है कि उसमें वास्तविकता का अंश हो और सत्य–स्थापना के प्रति व्यंग्यकार की आस्था हो। जिस सामाजिक कल्याण का प्रयोजन व्यंग्य वहन करता है, उसकी सिद्धि व्यंग्यकार की समर्थ एवं संवेदनशील जीवन दृष्टि के बिना सम्भव नहीं है। इसी सन्दर्भ में डॉ. शेरजंग गर्ग ने लिखा है–"जिस रचनाकार की जीवन दृष्टि जितनी सत्य–केन्द्रित तथा उदात्त है, करुण स्थितियों की मार्मिकता को जो रचनाकार जितनी गहराई समझेगा वह उतना ही श्रेष्ठ, क्रांतिदर्शी, मर्मस्पर्शी एवं साहित्यिक व्यंग्य लिख सकेगा। एकांकी, दुराग्रही, अनुदात्त दृष्टि रख कर कोई व्यंग्यकार श्रेष्ठ और सच्चा व्यंग्य नहीं दे सकता।''

व्यंग्य का गुटनिरपेक्ष चरित्र ही उसकी ईमानदारी है। व्यंग्यकार तो दो टूक बात कहने का अभ्यासी होता है। उसके तेजाब में सभी प्रकार के बाहरी प्रभाव खाक हो जाते हैं। यदि व्यंग्य तटस्थ और सत्याश्रायी न हुआ, तो व्यंग्यकार चाटुकार बन जायेगा। व्यंग्य का चारित्रिक औदात्य व्यंग्यकार के दृष्टिकोण पर आधारित है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के व्यंग्य में निहित विशेषताओं की ओर संकेत करते हुए कहा है–"साधारण हिन्दू ग्रहस्थ पर आक्रमण करते समय वे लापरवाह होते हैं और इसीलिए लापरवाहीभरी एक हंसी उनके अधरों पर मानो खेलती रहती है। मानो वे इन अपने आदमियों को इस योग्य भी न समझ पा रहे हों, जिन पर आक्रमण किया जा सके। परन्तु इस लापरवाही इन आक्रमणों में एक सहज भाव और एक जीवन्त काव्य मूर्तिमान हो उठा है। यही लापरवाही उनके व्यंग्य की जान है।''

व्यंग्य लेखन का उद्देश्य

व्यंग्य एक ऐसा सोद्देश्य साहित्य है जिसका सीधा सम्बन्ध मानव जगत की विकृतियों के साथ है जिसकी सार्थकता उनके परिहार में है। इसका उद्देश्य यह है कि मानव अपने आचरण को बदलने के लिए विवश हो जाए तथा समाज स्वस्थ रूप अपनाने पर बाध्य हो जाए। व्यंग्य के प्रहार तथा सुधार की चर्चा करते हुए जेम्स हेन ने एक स्थान पर लिखा है–''बिजली की कड़क अनाचारी को भयभीत करती है और साथ ही वायु को शुद्ध भी करती है– पूरी ईमानदारी के साथ लिखे गए श्रेष्ठ व्यंग्य का भी यह स्वरूप है।''

समाज में अनेकानेक दुराचार तथा अपराध प्रचलित हो जाते हैं जिन्हें कानून द्वारा दण्डित नहीं किया जा सकता। नैतिक चेतना तथा धर्म में विश्वास आदि भी लोगों को अपराध करने से नहीं रोक पाते। व्यंग्य उन

सभी आडम्बरों को उघाड़कर पाठकों के सम्मुख उसे नग्न रूप में रखने का प्रयास करता है। साथ ही जिन्हें किसी प्रकार की आत्मग्लानि अनुभव नहीं होती व्यंग्य उनकी आत्मरति के भाव को आघात पहुंचाकर उन्हें कर्तव्य पथ पर ले जाते हैं।

व्यंग्य के सम्बन्ध में ड्रायडन ने एक स्थान पर लिखा है कि ''व्यंग्य की मूलभूत प्रवृत्ति निर्देशात्मक नैतिक दर्शन जैसी है। वास्तव में नागरिक व्यवहार सम्बन्धि नियम अथवा दीवानी कानून सम्पूर्ण दोषों तथा अपराधों का उन्मूलन नहीं कर सकते। परन्तु व्यंग्य मनुष्य की आत्मग्लानि की वृति को जागृत करने के कारण एक शक्तिशाली और तत्क्षण प्रभाव डालने वाले न्याय मण्डल का कार्य करता है। इस प्रकार व्यंग्य आत्मग्लानि के अंकुश द्वारा मानव की नैतिक चेतना को बढ़ाकर उसके मस्तिष्क को, सामाजिक अथवा धार्मिक आदेश स्वीकार करने के लिए तैयार करता है।''

वर्तमान समय में विज्ञान के बदौलत समाज में अनेक प्रकार की विकृतियाँ एवं विसंगतियाँ आ गई हैं। व्यंग्य, मानव को इन दुर्बलताओं तथा विकृतियों के प्रति सचेत करता है तथा स्वस्थ मूल्यों की स्थापना के लिए प्रेरणा देता है। एक ओर धार्मिक संघर्ष में मानव के नैतिक मूल्यों का अपकर्ष हो रहा है। तो दूसरी ओर मनोविज्ञान ने उपचेतना के रहस्यों को उद्घाटित कर मानसिक द्वन्द्वों को गहरा कर दिया है। परिणामतरू बाह्यडम्बर तथा मिथ्याचार की वृद्धि हो रही है। अंग्रेजी के आलोचक जेम्स हैने ने एक स्थान पर लिखा है कि हमें अपनी अशिष्ट कुवासनाओं को रहस्यात्मक ढंग से महत्व नहीं देना चाहिए, और न ही बड़ी चतुराई से शिष्टाचार के नाते उन्हें छिपाने का ही प्रयत्न करना चाहिए।''

हिन्दू संस्कृति के जीवन में धर्म तथा समाज का गहरा सम्बन्ध है। यही कारण है कि सामाजिक कुरीतियाँ अथवा कुप्रथाएँ धर्म सम्मत होकर, समाज में व्याप्त होकर अत्याचार का कारण बनती जा रही है। इसके अतिरिक्त धर्म के संरक्षकों की निरंकुशता के कारण जब धर्म के क्षेत्र में भी बाहय्डम्बर तथा पाखण्ड बढ़ा है तब भी व्यंग्य तर्क द्वारा अन्धविश्वास का नाश कर धर्म के सच्चे स्वरूप को पहचानने में सहायक सिद्ध होता रहा है।

व्यंग्य का उद्देश्य है शिष्टता के आवरण में छिपी अशिष्ट वासनाओं का उद्घाटन करना, धार्मिक आडम्बरों का निवारण करना राजनीतिक आतंक के वातावरण में भी कुशासन की आलोचना करना तथा समाज की समान्यतरू स्वीकृत कुरीतियों तथा दुर्बलताओं से अवगत कराना। संक्षेप में व्यंग्य साहित्य एक प्रकार का निर्देशात्मक नैतिक निर्देशन है जिसका उद्देश्य नैतिक चेतना को जाग्रत कर विकृतियों को ध्वंस करना है तथा स्वस्थ मूल्यों की स्थापना में सहयोग देना है।

व्यंग्य के सम्बन्ध, यानि व्यंग्य के उद्देश्य से सम्बन्धित निम्नलिखित विशेषताएं स्पष्ट होती हैं–

- व्यंग्य एक समाज धर्मी विधा है।
- व्यंग्य का उद्देश्य मात्र हँसना – हँसाना या कोरा मनोरंजन करना नहीं है।
- व्यंग्य का मूल उद्देश्य परिशोधन द्वारा सुधार करना है।
- व्यंग्य नैतिकता का प्रबल समर्थक है।
- व्यंग्यकार यथार्थ का सजीव चितेरा होता है।
- व्यंग्य मानसिक स्तर पर उद्भूत एक विशिष्ट भंगिमा है।
- व्यंग्यकार की दृष्टि विश्व दृष्टि होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. कबीर–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ. 164
2. रिमझिम–डॉ. रामकुमार वर्मा पृ. 11
3. हिन्दी साहित्य में हास्य रस–डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी – पृ. 42
4. हिन्दी नाटकों में हास्यतत्व–डॉ. शान्तारानी पृ. 73
5. सरगम–कृष्ण चन्दर पृ. 51

6. शहर बन्द क्यों है ? भूमिका सुबोध कुमार श्रीवास्तव पृ. 1
7. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य कथाएँ–कन्हैयालाल नंदन पृ. 8
8. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य–डॉ. शेरजंग गर्ग पृ. 27
9. तेल की पकोड़िया–डॉ. प्रभाकर माचवे पृ. 5
10. एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका वोल्यूम रिचर्ड गारनेट
11. सटायर मैथ्यू अगार्थ पृ. 348
12. जोनाथन स्विफ्ट एण्ड दि एनाटोनी ऑफ सेटायर जान. एम. बुलिट
13. हिन्दी के व्यंग्य निबन्ध–डॉ. आनन्द प्रकाश गौतम
14. नई कहानियाँ मार्च 1969, पृ. 117
15. हिन्दी कविता में हास्यरस–डॉ. नगेन्द्र–वीणा सितम्बर पृ. 34
16. हास्यरस और आधुनिक हिन्दी साहित्य–डॉ. त्रिलोकी नाथ दीक्षित
17. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी किवता में व्यंग्य–डॉ. शेरजंग गर्ग – पृ. 69
18. आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यंग्य–डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी
19. व्यंग्य और भारतेन्दु युगीन गद्य मांगीलाल उपाध्याय पृ. 52–53
20. व्यंग्य और भारतेन्दु युगीन गद्य–डॉ. मांगीलाल उपाध्याय पृ. 52–53
21. हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य–डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी पृ. 71
22. द आर्ट ऑफ सटायर–डेविड वोर चेस्टर (लन्दन 1951) पृ. 77
23. ए ग्लोसरी ऑफ लिटररीटमर्स–एम. एच. अब्राहम 1968 पृ. 10
24. आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य–डॉ. वीरेन्द्र मेहन्दी रत्ता पृ. 20
25. हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य–डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी पृ. 65
26. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य डॉ. शेरजंग गर्ग पृ. 45
27. कबीर–डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ. 164
28. स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता मेंव्यंग्य–डॉ. शेरजंग गर्ग पृ. 81
29. हिन्दी का स्वातन्त्र्योत्तर हास्य और व्यंग्य–डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी पृ. 67
30. सदाचार का ताबीज–ह.श.प. पृ. 6, 1967
31. भगवती चरण वर्मा
32. कविता के नये प्रतिमान–डॉ. नामवर सिंह पृ. 6 (1967)
33. नागर पत्रिका–बेढ़ब स्मृति पृ. 56
34. धर्मयुग पृ. 46
35. सारिका, मई–1970 पृ. 46
36. इंगलिश सटायर–मेम्स सथरलैण्ड पृ. 19
37. आधुनिक हिन्दी साहित्य में व्यंग्य–डॉ. वीरेन्द्र मेहन्दी रत्ता पृ. 22 38. वहीं. पृ. 23.

❖◆❖